ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-I* Issue-VI* September-2016
Anthology : The Research

वैश्वीकरण और समाज पर प्रभाव

तरन्नुम यूसुफ
प्रवक्ता,
समाजशास्त्र विभाग,
हलीम मुस्लिम पी0 जी0 कॉलेज,
कानपुर

सारांश

वैश्वीकरण की शुरूआत विकसित देशों ने अपनी अर्थ व्यवस्था को मजबूती प्रदान करने लिए की थी, लेकिन शीघ्र ही इसने समाज के सभी वर्गों एवं क्षेत्रों को अपनी गिरफ्त में ले लिया। आर्थिक उदरीकरण के रूप में ही भारत में वैश्वीकरण की शुरूआत हुई। फलस्वरूप अनेक विकसित देशों ने प्रत्यक्ष विदेशी निवेश किया, वैश्वीकरण ने संसार की तमाम विचार धाराओं और अवधारणाओं को अपने अनुकूल बना लिया है।'समाजवाद' जैसी धुर भूमंडलीयकरण विरोधी विचारधाराओं को भी जिसने अपने फायदे के लिए इस्तेमाल करना प्रारम्भ कर दिया। समाजवाद और पूँजीवाद दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। ''समाजवाद का पहलू पूँजीवाद के सामने फीका पड़ता जा रहा है। वैश्वीकरण से जहॉ पर विज्ञान एवं तकनीकी, सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक क्षेत्रों में लाभ मिले वहीं पर वैदिक मूल्यों की कमी, राष्ट्र प्रेम की भावना में कमी, शिक्षा का व्यापारीकरण, सामाजिक विघटन, स्थानीय भाषाओं की उपेक्षा बुनियादी लक्ष्यों की अनदेखी होने लगी। सामन्यतः यह कहा जा सकता है कि वैश्वीकारण में भारतीय समाज को काफी सीमा तक प्रभावित किया है। इसके प्रभाव से समाज का कोई भी वर्ग, क्षेत्र अछूता नहीं रह पाया है।

मुख्य शब्द : वैश्वीकरण–विकसित, देश–भारतीय, समाज पर प्रभाव–वैश्विक परिदृश्य।

प्रस्तावना

वैश्वीकरण का अर्थ

वैश्वीकरण वर्तमान आधुनिक युग की पहचान है, या कहें तो वैश्वीकरण आधुनिकता का प्रतिनिधि है। सामान्य तौर पर वैश्वीकरण या भूमण्डलीकरण का अभिप्राय भूमण्डल के विभिन्न देशों के मध्य सम्बन्धों को विकसित करने वाली प्रक्रिया से है। आमतौर पर वैश्वीकरण की प्रक्रिया का सम्बन्ध आर्थिक जगत से माना जाता है। लेकिन सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन की यह प्रक्रिया समाज के अन्य क्षेत्रों से भी सम्बन्धित हो सकती है।

वर्तमान समय में प्रत्येक राष्ट्र–विकास के पथ पर दौड़ने के लिए प्रयासरत है। चूँकि वर्तमान समय विज्ञान एवं तकनीकी विकास का समय है और ऐसे समय में प्रत्येक राष्ट्र को अपने विकास के लिए विज्ञान एवं तकनीकी ज्ञान की जानकारी होना आवश्यक है। भारत में वैश्वीकरण या भूमण्डलीकरण की भावना प्राचीन समय से ही विद्यमान है। भारतीय लोगों ने सदा ही ''वसुदेव कुटुम्बकम'' की भावना में विश्वास किया है।

भूमण्डलीय या वैश्वीकरण ऐसी अवधारणा है जो समस्त विश्व के देशों को एक मंच पर एकत्रित करके आपसी सहयोग व समझौते के आधार पर व्यापार करके उन्नति हेतु परस्पर आदान–प्रदान एवं तकनीकी के हस्तांतरण द्वारा विविध देशों को लाभ प्रदान करके उसके बदले में मुनाफा कमाने को प्रमुखता देती है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि ''वैश्वीकरण या भूमण्डलीकरण एक ऐसी व्यापक सामाजिक प्रक्रिया है जो सम्पूर्ण मानव–जीवन को स्वयं में समाहित कर लेती है। जिसमें विश्व के समस्त राष्ट्र एक मंच पर एकत्रित होकर परस्पर आपसी सहयोग व समझौते के द्वारा शिक्षा व्यापार, विज्ञान एवं तकनीकी व राजनैतिक लाभ उठाते हैं'' समाजशास्त्रीय दृष्टि–कोंण वाले सर्वप्रथम समाजशास्त्री ''एथनी गिड्डेन्स है। यह उत्तर आधुनिक समाजशास्त्री हैं। उन्होंने अपनी पुस्तक "The Consequences of Modernity 1990" में वैश्वीकरण की परिभाषा प्रस्तुत की है।

''विभिन्न लोगों एवं विश्व के विभिन्न क्षेत्रों के मध्य बढ़ती हुई पारस्परिकता ही वैश्वीकरण है। यह पारस्परिकता सामाजिक–आर्थिक सम्बन्धों में निहित होती है। इसमें समय एवं स्थान का कोई महत्व नहीं होता।''

उद्देश्य

सन् 1950 और 1960 के दशक में अधिकांश विकासशील राष्ट्रों ने प्रगति और संवृद्धि के लिए जो रणनीति अपनाई उसमें नियोजित अर्थ–व्यवस्था पर बल देते हुए आर्थिक संवृद्धि तथा सामाजिक क्षेत्र के महत्व को स्वीकार किया गया। यह अपेक्षा की गई कि आर्थिक संवृद्धि तथा सामाजिक राजनीतिक विकास से अवशेष का जन्म होगा। 70 और 80 (सत्तर और अस्सी) के दशक में विश्व–व्यापी मंदी के चलते अधिकांश विकासशील राष्ट्रों की अर्थ–व्यवस्था लड़खड़ाने लगी, इसका मुख्य कारण इन राष्ट्रों द्वारा लिया गया भारी ऋण था, सार्वजनिक क्षेत्र में जो निवेश किया गया था उसका कोई प्रभावशाली परिणम नहीं आया और सार्वजनिक क्षेत्र के अधिकांश उपक्रम कोई विशेष अवशेष पैदा नहीं कर पाए विकास में परिवर्तन की माग विश्व–व्यापी धरातल पर होने लगी, इस माँग ने नीति–निर्धारकों के समक्ष कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न किये। विकासशील भारतीय समाज में वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने अनेक समस्याओं को तो जन्म दिया ही है, इससे अनेक अन्य महत्वपूर्ण प्रश्न भी उठ खड़े हुए हैं।

स्वतन्त्रता के पश्चात् देश में आर्थिक एवं सामाजिक विकास के लिए नियोजन की प्रक्रिया अपनाई गई जिससे भारतीय–सामाजिक एवं आर्थिक–व्यवस्था के नए–नए द्वार खुलें चूँकि नियोजन के पॉचवे दशक में देश की आर्थिक उथल–पुथल के कारण अर्थ–व्यवस्था में अनेक संरचनात्मक परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगे थे। फलस्वरूप भुगतान संतुलन लगभग धराशायी स्थिति में आने लगा था।

वैश्वीकरण का उद्देश्य निम्नवत्

1. उद्योग एवं व्यापार को कठोर नियन्त्रण से मुक्त करना।
2. देश की अर्थ–व्यवस्था एवं आर्थिक संस्थाओं के उत्पादन एवं कार्यनीति में सुधार।
3. सेवा क्षेत्र को बढ़ावा देना।
4. आय एवं रोजगार में शीघ्रता से वृद्धि।
5. हमारे देश के लोगों के जीवन को सुखमय बनाना।
6. अनावश्यक सरकारी हस्तक्षेप का अन्त।
7. आर्थिक उन्नति की दिशा में रूकावट के लिए राजकोषीय व्यवस्था के मुख्य तत्वों में सुधार।
8. आन्तरिक प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहित करना।
9. विदेशी मुद्रा एवं निवेश को आकर्षित करना।
10. हमारे संसाधन (मानव–संसाधन को लेकर) एवं क्षमता का उचित उपयोग।

भारत में वैश्वीकरण

भारत में इस नीति का समर्थन भूत–पूर्व प्रधान मन्त्री श्री नरसिंघराव तथा वित्त–मन्त्री रह चुके श्री मनमोहन सिंह को जाता है। भारत की आर्थिक उदारीकरण तथा आर्थिक की वृद्धि को लकर वैश्वीकरण की आवश्यकता पर जोर दिया जाने लगा। जिसके परिणाम स्वरूप भारत की आर्थिक–विकास दर में वृद्धि हुई वह भारत विश्व की सबसे तेजी से उभरती हुई व्यवस्थाओं में शामिल हो गया। सरल शब्दों में भूमण्डलीयकरण का अर्थ है ''देश को एक सूत्र में बॉधना सार्व भौमिकता और वैश्वीकरण शब्दों को भी भूमण्डलीयकरण युग कहा जाता है भूमण्डलीयकरण प्रक्रिया बढ़ती जा रही है आजकल कम्प्यूटर के कारण विश्व का सम्पूर्ण ज्ञान भण्डार को इंटरनेट के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। वर्तमान समय में वैश्वीकरण की प्रक्रिया से कोई अछूता नहीं है इसलिए सामाजिक व्यवस्था पर वैश्वीकरण का प्रभाव पड़ा 1991 में इस नए आर्थिक–युग का सूत्रपात हुआ। वैश्वीकरण में वस्तुओं सेवाओं व पूँजी के मुक्त आदान–'प्रदान का समन्वय है 20वीं सदी के दौर में उदारीकरण और निजीकरण का उदय हुआ।

वैश्वीकरण का सामाजिक व्यवस्था पर प्रभाव

प्रसिद्ध समाजशास्त्री मैकाइवर ने कहा है–''समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है'' अर्थात सामजिक सम्बन्ध ही समाज का आधार स्तम्भ है। पर आज के युग में ये टूटते, रिश्ते, ये तार–तार होते सामाजिक सम्बन्ध क्या कह रहे हैं? इसका क्या कारण है? इसका परिणाम क्या होगा? ये अत्यन्त विचारणीय प्रश्न है, परिवर्तन प्रकृति का नियम है। इस शाश्वत नियम का असर जीवन के हर क्षेत्र में देखने को मिलता है। समाज में भी समय के साथ–साथ परिवर्तन आते रहते हैं। इन सामाजिक परिवर्तनों के विभिान्न रूप देखने को मिलते हैं। जहॉ परिवर्तनों के कुछ सकारात्मक परिणाम सामने आते रहते हैं और वही कुछ नकारात्मक परिणाम भी उजागर होते हैं। आज के भौतिकवादी वैज्ञानिक वैश्विक एवं भूमण्डलीयकरण की अवधारणा संयोग युग में व्यक्तिगत मूल्यों, सामाजिक मूल्यों और नैतिक मूल्यों आदि में परिवर्तन भी देखने को मिलता है। भूमण्डलीय और इसका सामाजिक व्यवस्था पर पड़ रहे बिन्दुओं के माध्यम से समझा जा सकता है–

1. बाजार का भाव
2. विस्तार
3. व्यवसायिक आवश्यकता
4. स्त्री की देह का माल के रूप में रूपान्तरण
5. सौन्दर्य और सेक्स का व्यापार।

भूमण्डलीकरण की विचार धारा को समाज के अर्न्तसम्बन्ध में समझना आज के समय की अनिवार्यता आवश्यकता है। वैश्वीकरण ने संसार की समस्त विचार धाराओं और अवधारणाओं को अपने अनुकूल बना लिया है।''समाजवाद'' जैसी धुर भूमण्डलीय विरोधी विचार–धारा को भी जिससे अपने फायदे के लिए इस्तेमाल करना प्रारम्भ कर दिया हो तो उसकी ताकत का अन्दाजा लगाया जा सकता है। समाजवाद का पहलू पूँजीवाद के सामने फीका पड़ता जा रहा है। यही कारण है कि सामाजिक परिवर्तन की विचार–धारा को भी वैश्वीकरण ने उसे अपने अनुकूल बना लिया है कैसे? यह समझने की आवश्यकता है। वैश्वीकरण का यह अर्थ बिल्कुल भी नहीं है समस्त विश्व एक ग्राम में बदल रहा है। या बदलते जाने कि प्रक्रिया को वैश्वीकरण अभिव्यक्त करता है। इस अवधारणा को समझने के साथ हमें यह भी समझ लेना चाहिए कि इस अवधारणा या वैश्वीकरण का सम्बन्ध किससे है और यह भी कि इसका मूल–चरित्र क्या है? वैश्वीकरण का मात्र सम्बन्ध पूँजी से है न कि विश्व या विश्व के निवासियों से पूँजी हमेशा केन्द्रीकरण चाहती है।

यानि कि सारी दुनिया की पूॅजी का केन्द्र एक या कुछ हाथों में हों। यही वैश्वीकरण का वैश्विक ग्राम का वास्तविक अर्थ हैं। कि सारी दुनिया की पूॅजी का केन्द्र एक है। वैश्वीकरण में सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रकार की ऊर्जा मिलती है। वैश्वीकरण एक दो धारी तलवार है वैश्वीकरण के विभिन्न क्षेत्रों में सकारात्मक परिवर्तन हो रहे हैं जब कि अन्य क्षेत्रों में नकारात्मक परिवर्तन दिरवाई पड़ रहे है। वैश्वीकरण सामाजिक परिवर्तन की वह प्रक्रिया है। जिससे पूरा विश्व समाज आन्दोलित हो रहा है। 90 के दशक के समाप्त होते–होते भारत में खुली ''अर्थ–व्यवस्था'' पर आधारित नई आर्थिक नीति अपनाई गई, जिसके तहत तीन बाते–उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण पर प्रमुखता से जो दिया गया। शिक्षा के क्षेत्र में उदारवादी नीतियों को लागू किये जाने के फलस्वरूप धीरे–धीरे राज्य शिक्षा के दायित्व से मुक्त होता जा रहा है। अर्थात् शिक्षा का व्यावसायीकरण व बाजारी करण हुआ है। वैश्वीकरण के फलस्वरूप समाज में एक महत्वपूर्ण बदलाव सूचना प्रौद्योगिकी का विस्तार होना है।

वैश्वीकरण और इसकी सहयोगी प्रक्रियाओं के कारण भारतीय समाज में संयुक्त परिवारों का विघटन और एकाकी परिवारों का जन्म तो पुरानी बात हो गई है। पर वर्तमान समय में भारतीय परिवारों की संरचना में कुछ नये रंग–रूप दिखाई दे रहे हैं। जैसे–एकल माता–पिता वाले परिवार '' लिव इन रिलेशनशिप, विवाहितों व अविवाहितों द्वारा बच्चों को गोद लेकर परिवार का निर्माण करना वैश्वीकरण की ही देन है। भौतिकवादी चकाचौंध और उपभोक्ताओं संस्कृति ने परिवार के हर सदस्य को मोबाइल, कार, बाइक क्रेडिट कार्ड आसानी से सुलभ करा दिया है। जिससे लोगों की जीवन–शैली बदल गई है। वैश्वीकरण से ही विदेशों से बड़ी–बड़ी संस्थायें और कम्पनियॉ भारत में स्थापित हुई। जिन्होंने न सिर्फ पुरूषों को बल्कि महिलाओं को भी कार्य करने का मौका दिया है। इससे महिलाओं में आत्म–विश्वास बढ़ा है। वे अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो गई है। आज महिलाएं अनेक समितियों से जुड़ी हुई हैं। भारतीय महिलाओं ने विश्व में अपनी एक पहचान बना ली है।–

श्रीमती प्रतिभा पाटिल देवी सिंह पाटिल भारत की प्रथम महिला प्रधान मन्त्री राष्ट्रपति तथा मीरा कुमार भारत की प्रथम लोग–सभा अध्यक्ष बनना ऐसे उदाहरण है जो भारत में महिला सशक्तिकरण को दर्शाते हैं–

भूमण्डलीकरण की अवधारणा का मूल चरित्र इस बात में निहित है कि वह व्यक्तिगत पहचान को सिरे से खारिज करती है। व्यक्तिगत से यहॉ अभिप्राय सिर्फ व्यक्ति से नहीं है। क्षेत्र विशेष की पहचान क्षेत्रीय संस्कृति ही नहीं बल्कि राष्ट्रीयता और राष्ट्रीय पहचान ही व्यक्ति के अन्तर्गत आती है। जब उपनिवेशवाद और सामाज्यवाद जैसे शब्दों का इस्तेमाल होता है। तो उसमें अन्तर्निहित शोषक, चरित्र साफ झलकता था। आज उदारीकरण, बाजार व्यवस्था आर्थिक सुधार ढांचागत समायोजन, भूमण्डलीयकरण आदि शब्दों की बाजीगरी के सहारे उसी शोषण को जारी रखने का अभियान चलाया जा रहा है। हमारे देश की अर्थ–व्यवस्था हमेशा से मिश्रित–अर्थव्यवस्था रही है। जिनमें राज्य का नियन्त्रण और बाजार आधारित व्यापार दोनों के मिले–जुले रूप हमेशा रहें फिर भी इस मिश्रित अर्थ–व्यवस्था के अन्तर्गत राज्य का नियन्त्रण कुछ अधिक था, इसी नियन्त्रण को समाप्त कर देने की प्रक्रिया ही वैश्वीकरण या उदारीकरण कहलाती है। कभी–कभी यह प्रश्न भी उठाया जाता है कि उदारीकरण लागू होने से राष्ट्रीय हितों की अनदेखी तो शुरू नहीं हो जाएगी तो यह समझना आवश्यक है कि इसके दुष्परिणाम हमारी सामाजिक–राजनीतिक व्यवस्था में बाधक बनना शुरू हो चुके हैं। परन्तु इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि वैश्वीकरण के विभिन्न पक्षों पर इसके द्वारा राष्ट्रीय हितों की अनदेखी की जाए– उदारीकरण के औचित्य के पीछे कुछ तर्क दिये जाते हैं। कि इस समय हमारा देश विदेशी–मुद्रा की कमी की मार झेल रहा या हमारे ऋणदाता, हमारा गला दबाने पर उतारू थे और भुगतान संतुलन बुरी स्थिति में पहुॅच चुका था। हमे विदेशी मुद्रा प्राप्त करने के लिए सोना गिरवी रखना पड़ा था और हमारे वित्तीय संकट के समय में कोई भी देश उदारता नहीं दिखा रहा था। अतः इसी समय अर्न्तराष्ट्रीय मुद्रा कोष ने हमारी मजबूरियों का फायदा उठाया। इस प्रकार से उदारीकरण हमारी अनिवार्य आवश्यकता बना दिया गया।

वैश्वीकरण के प्रमुख आयाम

अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने अपने पहले भाषण में कहा है कि उनकी नीति होगी ''हायर अमेरिकन एण्ड बाई अमेरिकन! अमेरिकन फर्स्ट इत्यादि। एक तरह से देखा जाए तो यह भारतीय ''प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी के मेक इन इण्डिया'' सिद्धान्त के समान लगाता है। भारत अमेरिका की कम्पनियों के तहत देश के भीतर उत्पादन के लिए विवश कर सकता है। तो अमेरिका भी अपने देश में रोजगार पैदा करने के लिए कुछ ऐसे कदम उठा सकता है। हालांकि हमें यहॉ पर दो बातें जरूर ध्यान में रखनी चाहिए एक तो अमेरिका ''मुक्त बाजार'' का घोर समर्थक रहा है ओर दूसरी ओर अमेरिका एक विकसित देश ऐसे में वह आखिर कैसे संरक्षणवाद की बात कर रहा है। भारत को बाई अमेरिकन से कोई फर्क नहीं पड़ता है। इसका कारण यह है कि अमेरिकी बाजार में भारतीय उत्पादों की बहुत ज्यादा पकड़ नहीं है। लेकिन हायर अमेरिकन के सिद्धान्त से भारतीय नवयुवकों को निराशा जरूर हुई है। समाजवादी अर्थ–व्यवस्था के पतन के बाद बाजार व्यवस्था एक वैश्विक विकल्प के रूप में उभर कर आयी है। इस नई बाजारी अर्थ व्यवस्था में किसी राष्ट्र की आम जरूरतों के आधार पर राज करने वाली बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के हाथों में राष्ट्रीय अर्थ–व्यवस्था के सारे सूत्र आते हैं। ये बहुराष्ट्रीय कम्पनियॉ अपने हित में बाजार के नियम कायदे तय कर रही हैं। वैश्विक स्तर पर दो भागों में विभाजित है। पहला अर्न्तराष्ट्रीय बाजार का सिद्धान्त हैं और दूसरा भूमण्डलीयकरण बाजार का अर्थात् इंटरनेशनल और ग्लोबल मार्केट भूमण्डलीकरण बाजार ने पूरी दुनियॉ को एक गॉव ग्लोबल विलेज मानता है। आज दुनिया विश्व ग्राम बन गई है। एक उदाहरण के रूप में अंग्रेजी भाषा को ही लें लें जिसे पिछली तीन–चार शताब्दियों से

लगातार दुनिया पर थोपा जा रहा है। दुनिया में कितने प्रतिशत लोगों की मूल भाषा अंग्रेजी बनी या है? और क्या इसे वास्तविक अर्थों में भूमण्डलीय भाषा कहा जा सकता है। आज का मीडिया विज्ञापन और अन्य तरीकों से यही कार्य करता है, वह दुनिया भर के लोगों की अभिरूचियों को अनुकूलित कर एक से उत्पादन के लिए बाजार तैयार करता है। सच्चे अर्थों में यही वैश्वीकरण की परिघटना घटित हुई दिखाई देती है। इस संदर्भ में वैश्वीकरण का एक अन्तर्विरोध यह सामने आता है कि वह स्वयं समान नहीं रह पाता है। पूँजीवादी उत्पादन व्यवस्था का स्वरूप ही है कि वह निरन्तर अपने उत्पादन को बदलती रहे और न केवल उत्पादन को बल्कि उत्पादन के तरीकों को भी साथ ही सामाजिक सम्बन्धों और मूल्यों को भी। इस स्थिति में पूँजीवाद अपने को जिन्दा रख पाता है।

वैश्वीकरण का अर्थ एक ऐसी सभ्यतामूलक एकता पैदा करना है जो पश्चिमी प्रतिमानों पर आधारित है। पश्चिमी पूँजी का प्रवाह दूसरी और तीसरी दुनिया की ओर होना, यह प्रवाह उल्टा कभी नहीं होगा। न इसके बारे में कभी सोचा गया कि आधा भारत अंग्रेजी सीखे तो आध अमेरिकन हिन्दी या तमिल सीखेगा। या कि कपड़े हम आपके अनुसार पहनेंगे तो भोजन आप हमारी तरह करेंगे? या पूँजी आप भेजेंगे तो उसी अनुपात में हम मजदूर आपके यहॉ भेजेंगे? या आपके यहॉ बर्गर, पिज्जा, सेलफोन पेस्ट,क्रीम पाउडर हमारे यहॉ आएगा तो भारत में मटक, कुल्हड़ रोटी बनाने के कोयले और तवा चंदेरी की साड़ी आगरे का पेठा और जूते आपके यहॉ भेजेंगे।

नब्बे के दशक को वित्तीय पूँजी के वैश्वीकरण के लिया जाना जाता है। भारत में 24 जुलाई 1991 के बजट से भारत का वैश्वीकरण की ओर पहला कदम था। वैश्वीकरण से जो मूलभूत परिवर्तन हुए उनमें प्रमुख हैं– गॉव के स्थान पर अर्थ और सत्ता के केन्द्र शहर हो गए और व्यक्ति के स्थान पर उपभोक्ता का निर्माण होने लगा। नारी को जिस में बदला जाने लगा। जो जिस और उपभोक्ता बनने लायक नहीं है। उनके अस्तित्व को ही परिदृश्य से हटा दिया गया। इसलिए यह कहा जा सकता है कि वैश्वीकरण केवल कुछ लोगों के लिए बेतहाशा समृद्धि का पैगाम लेकर आया। लेनिक यह समृद्धि बहुसंख्यक लोगों के गरीबी, बेकारी, भुखमरी, आत्महत्या, और हत्या बलात्कार, शोषण और अनेक तरह की विषमता का अर्थशास्त्र बन कर आया और उसके आसपास रहने वाले लोगों का अस्तित्व ही खतरे में डाल दिया गया। पहले वे अपनी रोजी–रोटी कैसे भी कमा लेते थे, अब विकास के नाम पर और अभिजात्य संस्कृति के मूल्यों के कारण उन्हें रोजगार के स्थानों, सड़कों और झुग्गी झोपड़ियों से बेदखल किया जा रहा है। विकासशील समाज में वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने सामाजिक व्यवस्था में अनेक समस्याओं को जन्म दिया ही है, इससे अनेक महत्वपूर्ण प्रश्न भी उठ खड़े हुए हैं, ये प्रश्न तथ्यगत और प्रक्रियागत दोनों प्रकार के है, तथ्यागत प्रश्नों का सम्बन्ध मोटे तौर पर सुरक्षा, नागरिकों के कल्याणकारी और विकास के कार्यक्रमों, खास तौर पर निर्बल वर्गों के कल्याण से सम्बन्धित है, जबकि प्रक्रियागत प्रश्न शासन और नीति–प्रक्रिया पर वैश्वीकरण और प्रतिस्पर्धा से सम्बन्धित है। इसके साथ यह भी एक सवाल है कि क्या कभी विकास के नाम पर किसी मल्टीप्लेक्स को हटाया गया, किसी बड़े उद्योगपति की फैक्ट्री को हटाया गया।

क्या किसी पूँजीपति या उद्योग पति नेता या कोई पॉश कॉलोनी इस विकास के रास्ते में आए जिसे हटाया गया हो और शहर से इतनी दूर जगह दी गई हो कि वहॉ बाजार ही उपलब्ध न हो।

वैश्वीकरण दानव आर्थिक मुखौटा पहनकर सारी दुनिया को आतंकित कर रहा हैं। परन्तु इसका सर्वाधिक खतरनाक चेहरा है मानवीय चेतना को विज्ञापन और कामनाओं के सौन्दर्य मूलक मायावी संसार में भटकाना अभी इस बात का मूल्यांकन होना शेष है कि जिस तरह आधुनिकता ने मानवीय चेतना को औद्योगिक पूँजीवाद के लिए अनुकूलित किया था। उसी तरह वैश्वीकरण ने मानवीय चेतना को वृद्ध पूँजीवाद के लिए कितना और किस तरह अनुकूलित किया है और भविष्य में कितना करेगा। मानवीय चेतना को अनुकूलित करने के लिए बहुत बड़ा माध्यम जनसंचार के साधनों के रूप में है! यह वे साधन हैं जो बच्चों से लेकर बूढ़ों तक सबकों अपनी गिरफ्त में ले लिया है। उनके लिए तो वही दुनिया जीवन है जो मीडिया उन्हें परोस रहा है। साहित्य, अनुभूति और विचार से सम्बद्ध थे और इनका प्रसार मानवीय चेतना को उठाने को उठाने के उद्देश्य से किया जाता था,परन्तु अब मानवीय चेतना संवेदना रहित क्रूर होती जा रही है। चेतना को चैतन्य बनाए रखने के जा साधन थे वे अभिजात्यीय विकास के साधन मात्र बन कर रह गए हैं। वैश्वीकरण एक अलग किस्म के व्यक्ति का निर्माण कर रहा है। यह व्यक्ति नागरिक किसी भी राष्ट्र का हो सकता है। परन्तु उपभोक्ता सिर्फ अमेरिकी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का होता है। यह ऐसा व्यक्ति होता है। जो अपनी जड़ों से पूरी तरह कटा हुआ होता है और इसके ऊपर कोई छत्र–छाया नहीं होती। इस परिदृश्य में आम–आदमी गायब है। आम–आदमी की याद तब आएगी जब चुनाव सर पर आएंगे और वोट की आवश्यकता नेताओं को होगी। तब भी यह भ्रम नहीं पालना चाहिए कि वह आम–आदमी के हित में लिया गया निर्णय होगा। इस तरह वैश्वीकरण सिर्फ विषमता का अर्थ–शास्त्र बन कर रह गया है।

आधुनिक युग में केवल पूँजी विनिमय का माध्यम नहीं होती वह नियन्त्रणकारी शक्ति के रूप में स्वयं को विकसित करती ह। यह नियन्त्रण उत्पादन और उत्पादन के साधनों तक ही सीमित नहीं रहता बल्कि सामाजिक संबन्धों राजनीतिक और आर्थिक नीतियों, सांस्कृतिक रूपों मानवीय चेतना और ज्ञान, विज्ञान के सभी क्षेत्रों तक पहुँच जाता है, वैश्वीकरण के इस दौर में सामाजिक व्यवस्था में पूँजी के नए–नए तरीके खोज लेती है। जैसे वर्तमान में विश्वबैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व व्यापार संगठन पहले दूसरी और तीसरी दुनिया के देशों में आर्थिक संकट पैदा करने के लिए स्थितियॉ पैदा करते हैं। इसके साथ ही मीडिया आम आदमी की चेतना को नियन्त्रित करने का सबसे सशक्त माध्यम है। मीडिया, जनसम्पर्क जनमत–सर्वेक्षण आदि के जरिये लोगों के दिमाग को बदलने का काम करती है। इस प्रकार वह अपने पक्ष में सहमति का

निर्माण करती है। बहुत सारी मानवीय एवं बेहतर मूल्यों को मटियामेट कर बहुराष्ट्रीय कम्पनियॉ अपने बाजार की जरूरतों के मुताबिक मूल्य एवं मानयताएँ निर्धारित करती हैं। यह बहुत ही भयावह स्थिति है। वैश्वीकरण की इस प्रक्रिया में राष्ट्रीय जीवन के सांस्कृतिक मूल्यों की जगह उन मूल्यों को स्थापित हो जाने का खतरा है। जो पश्चिमी दुनिया के नव साम्राज्यवादी मंसूबों के पोषक है।

निष्कर्ष

यदि हम स्वयं को वैश्वीकृत व्यवस्था के अनुरूप में परिवर्तन कर देंगे तो हम अपनी पहचान और व्यवस्था को खो सकते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि वैश्वीकरण व्यवस्था क्षमता व गुणवत्ता पर आधारित है। वैश्वीकरण गरीब, दलित जातियों को दरिद्रीकरण अलगाव और अन्याय के सन्दर्भ में भी कोने में ढकेल रहा है। निर्धन और निर्धन हो रहे हैं। लोगों के भोग–विलास में अप्रत्याशित वृद्धि हो रही है। अब सारी दुनिया उत्कृष्ट खाद्य सामग्राी प्रसाधन सामग्री, मोटर गाड़ी सब कुछ उपलब्ध है। पर न तो बेरोजगारी कम हुई न भूखमरी निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि वैश्वीकरण विश्व के लिए अपरिहार्य है। इसलिए हमें इसकी चुनौतियों का सामना करना होगा। यद्यपि हमारे समाज की सामाजिक व्यवस्था पर वैश्वीकरण का सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रभाव पड़ा है और इसके प्रभाव से समाज का कोई भी क्षेत्र अछुता नहीं रहा है वैश्वीकरण बुरा नहीं है किन्तु इसका प्रयोग बुरा है वैश्वीकरण का यह नया अवतार दरिद्रता के समुद्र में सम्पन्नता के कुछ टापू ही पैदा कर सकता है। वैश्वीकरण की अवधारणा के सन्दर्भ में कई मुद्दे हैं जिनपर विचार किया जाना चाहिए। जैसे कि वैश्वीकरण का वास्तविक फायदा कौन उठा रहा है? इस प्रक्रिया में स्त्रियों और मजूदरों के जीवन में वास्तविक परिवर्तन क्या और कैसे हो रहे है? इसका प्रभाव मध्यम वर्गीय जीवन पर किस रूप में पड़ रहा है? क्या मध्यम वर्ग का विस्तार हो रहा है, या वह सिकुड़ रहा है? इसके पीछे की तस्वीर क्या है? अब सवाल यह है कि इस अमानवीय व्यवस्था का विरोध क्यों नहीं हो रहा ? और हो रहा तो किस स्तर पर और कहॉ?

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *परिवर्तन और विकास का समाजशास्त्र डॉ0 जी0 मदन जी0 आर0, विवेक प्रकाशन नई दिल्ली पृष्ठ संख्या 327–328*
2. *शोध धारा पत्रिका (जर्नल) Val. 441 पृष्ठ संख्या 175–2012, 2013*
3. *तलाश (शोध पत्रिका) नवम्बर 2016 पृष्ठ संख्या 231–233*
4. *शोध–धारा वही पृष्ठ संख्या 120*
   वही 121
   वही पृष्ठ संख्या 124
5. *हिन्दुस्तान में प्रकाशित 24 जनवरी 2017 पृष्ठ संख्या 10*
6. *श्रृंखला (एक शोध परक वैचारिक पत्रिका) दिसम्बर 2011 पृष्ठ संख्या 15*
7. *तलाश (शोधपत्रिका) नवम्बर 2016 पृष्ठ संख्या 33*